शिक्षा सम्बन्धी मुद्दों का सामना

कलीसिया के अगुओं के सामने कलीसिया में ही पाई जाने वाली शिक्षा सम्बन्धी असहमति से बड़ी कोई और चुनौती नहीं है। शिक्षा सम्बन्धी मतभेदों के कारण भाइयों में फूट, कलीसियाओं में फूट, घरों में फूट, दुखी मन, समाज द्वारा सुसमाचार को न मानना और आत्माओं का खोना होता है। स्थानीय कलीसिया में शिक्षा सम्बन्धी ऐसे प्रश्न पैदा होने पर क्या किया जाना चाहिए?

शिक्षा सम्बन्धी झगड़ों को निपटाने के लिए ऐल्डरों को इस प्रकार से कार्य करना आवश्यक है जो पहले तो लग सकता है कि हमारी बात से मेल नहीं खाता है। हमने ज़ोर दिया है कि ऐल्डरों को चरवाहों की तरह नमूना देकर, प्रेरणा देकर और समझाकर अपने अधीन लोगों की अगुआई कोमलता से करनी चाहिए। आम तौर पर ऐल्डर कलीसिया के सदस्यों की अगुआई समझदारी से, सर्वसम्मति से अच्छे से अच्छा निर्णय लेने में करते हैं। परन्तु ऐसा समय भी आता है जब मण्डली के सदस्यों को कलीसिया के विश्वास की सर्वसम्मति को देखकर नहीं बल्कि अधिकार से निर्णय लेना होता है! ऐसा समय तब आता है जब कलीसिया में कोई सच्चाई से दूर होकर ऐसी शिक्षा देने और मानने लगता है जिससे लोग सच्चाई से दूर हों!

ऐसी स्थिति में चरवाहे का रूपक फिर लागू होता है। तब वह चरवाहा जो भेड़ों से कोमलतापूर्वक व्यवहार करता था, बाइबल की सीमाओं में रहते हुए ''फाड़ने वाले भेड़ियों'' को जो परमेश्वर के झुंड को उजाड़ रहे होते हैं, मात देने के लिए आवश्यक निर्णय लेता है (प्रेरितों 20:29, 30)। वही चरवाहा जो खोए हुए मेम्ने को अपने कंधों पर उठाकर घर लाता है (लूका 15:4-6) दाऊद की तरह बन जाता है, जिसने झुंड का शिकार करने वाले ''शेरों'' और ''भेड़ियों'' का नाश करने के लिए हथियार उठा लिया था (1 शमूएल 17:34-36)। परभक्षियों से झुंड की रक्षा करना भेड़ों को चराने, उनकी अगुआई करने, उन्हें ढूंढ़ने और उन्हें सांत्वना देने की तरह ही चरवाहे का काम है।

आवश्यक नहीं कि शिक्षा सम्बन्धी हर असहमति के लिए कठोर निर्णय लिया जाए। यह दुख की बात है लेकिन है सत्य कि शिक्षा सम्बन्धी मतभेदों के कारण ही कलीसियाओं में फूट पड़ी है जबकि ऐसा नहीं होना चाहिए था। इस कारण कलीसिया के अगुओं को शिक्षा सम्बन्धी मुद्दों का सामना करते समय समझदारी से काम करना चाहिए। उनकी

जिज़्मेदारी विशेषतया (1) कलीसिया की अगुआई इस तरह से करना है कि शिक्षा सज़्बन्धी असहमति पैदा ही न हो, और (2) ऐसी समस्या आने पर उसका समाधान उचित ढंग से करना। उनका काम शिक्षा सज़्बन्धी समस्याएं पैदा होने से रोकना और उनका समाधान करना है।

शिक्षा सज़्बन्धी समस्याओं को रोकना

शिक्षा सज़्बन्धी समस्याओं के सज़्बन्ध में ''परहेज़ सबसे अच्छा इलाज है।'' शिक्षा सज़्बन्धी समस्याओं को रोकने के लिए किसी मण्डली के अगुओं को पांच कदम उठाने आवश्यक हैं:

सुधार पर ज़ोर देकर

सबसे पहले, कलीसिया के अगुओं को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कलीसिया हमेशा उन सिद्धांतों पर ज़ोर देती है जो सदस्यों को दृढ़ और मेल को उत्साहित करते हों (रोमियों 14:17, 19)। प्रेम करने, सहायता करने, सिखाने और आत्माओं के उद्धार के कार्य में व्यस्त रहने वाली कलीसिया की अनावश्यक बातों के लिए, या उनमें कम दिलचस्पी होगी।

हर मण्डली का अपना अलग विचार होने के बावजूद भी लगभग हर मण्डली के अधिकतर लोग सिखाई गई 95 प्रतिशत बातों पर सहमत होंगे। इसके अलावा उनमें से अधिकतर विवेक की किसी समस्या के बिना कलीसिया की अधिकांश गतिविधियों में भाग ले सकते हैं। फिर प्रश्न ज़ोर देने की बात पर उठता है: कि उन कुछ बातों पर ज़ोर दिया जाए जिन पर हम असहमत हैं या उन बहुत सी बातों पर जिन पर हम एकमत हैं।

सच्चाई के प्रति समर्पित होना

कलीसिया के अगुओं के लिए परमेश्वर के वचन की सच्चाई के प्रति समर्पित होना आवश्यक है। *''खरी शिक्षा''* आवश्यक है। यीशु ने कहा, ''झूठे भविष्यवक्ताओं से सावधान रहो'' (मत्ती 7:15) और ''सत्य को जानोगे और सत्य तुज़्हें स्वतन्त्र करेगा'' (यूहन्ना 8:32)। पौलुस ने ''परमेश्वर की सारी मनसा'' का प्रचार किया (प्रेरितों 20:27)। गलतियों 1:6-9 में पौलुस ने यह स्पष्ट किया कि परमेश्वर का सुसमाचार केवल एक ही है; उसके अलावा दूसरी शिक्षा उस सुसमाचार का बिगाड़ है और जो वह शिक्षा देता है वह दण्ड के योग्य है। यहूदा ने ''उस विश्वास'' के विषय में कहा ''जो पवित्र लोगों को एक ही बार सौंपा गया था'' (यहूदा 3)। तीमुथियुस और तीतुस के नाम पत्रियों में वचन का प्रचार करने, खरी शिक्षा को पकड़े रखने और झूठे शिक्षकों से दूर रहने और उनका सामना करने के लिए निर्देशों की भरमार है (1 तीमुथियुस 3:3-7; 4:1-6; 6:3-5; 2 तीमुथियुस 4:1-5; तीतुस 1:12-16; 2:1)। 2 पतरस 2:1-3, 1 यूहन्ना 4:1-3 और 2 यूहन्ना 7-11 में झूठे शिक्षकों के विरुद्ध चेतावनियां दी गई हैं। कोई भी जो यह कहता है कि शिक्षा अलग होने से

कोई फर्क नहीं पड़ता या तो उसने नया नियम पढ़ा ही नहीं है या वह उस पर विश्वास नहीं करता!

ज़्योंकि खरी शिक्षा आवश्यक है, इसलिए कलीसिया के अगुओं के लिए यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि वे सच्चाई को पकड़े रहें। तीतुस 1:9 में पौलुस ने कहा कि एक अध्यक्ष के लिए आवश्यक है कि वह ''विश्वासयोग्य वचन पर जो धर्मोपदेश के अनुसार है, स्थिर रहे; कि खरी शिक्षा से उपदेश दे सके, और विवादियों का मुंह भी बन्द कर सके।''

कलीसिया को झूठे शिक्षकों और झूठी शिक्षा से बचाना कलीसिया के अगुओं का मुज़्य कार्य होता है (देखिए प्रेरितों 20:28-31.) तीतुस 1:9-11 के अनुसार इस कार्य को करने के लिए ऐल्डरों को कम से कम तीन ज़िम्मेदारियां दी गई हैं: (1) *सच्चाई का इतना ज्ञान होना कि वे सच्चाई और झूठी शिक्षा में अन्तर कर सकें।* उनके लिए आवश्यक है कि वे ''विश्वासयोग्य वचन पर जो धर्मोपदेश के अनुसार है, स्थिर रहें'' (आयत 9)। (2) *सच्चाई की शिक्षा दें और देखें कि जिस मण्डली में वे सेवा करते हैं उनमें सच्चाई सिखाई जा रही है:* ऐल्डरों के लिए ''खरी शिक्षा से उपदेश'' देना आवश्यक है (आयत 9)। (3) जिससे वे *झूठे शिक्षकों और झूठी शिक्षा का मुंह बंद कर सकें।* आयत 9 कहती है कि ऐल्डरों को खरी शिक्षा ''का विरोध करने वालों का मुंह बंद करने'' के योग्य होना चाहिए। (4) *झूठी शिक्षा झूठे शिक्षकों से झुंड की रक्षा करना।* आयत 10 और 11 में पौलुस ने विस्तार से बताया कि ज़्यों: ''ज़्योंकि बहुत से लोग निरंकुश, ... हैं; इनका मुंह बन्द करना चाहिए।''

सच्चाई की शिक्षा देना

ज़्योंकि खरी शिक्षा आवश्यक है, इसलिए इसे लगातार सिखाते रहना बहुत ही ज़रूरी है। यदि ''शिक्षा सज़्बन्धी'' प्रवचन न दिया जाए तो मण्डली झूठे शिक्षकों से प्रभावित हो सकती है। हमें यह याद रखना चाहिए कि केवल हम ही वह एक पीढ़ी हैं जो विश्वास से नहीं गिरे।

विचार के दायरे में स्वतन्त्रता की अनुमति

कलीसिया के अगुओं के लिए विश्वास और विचार के मामलों में अन्तर करना आवश्यक है। उन्हें चाहिए कि कलीसिया के सदस्यों को यह विश्वास करने की स्तवन्त्रता देने का निर्णय लें कि विचार के क्षेत्र में उनकी ज़्या इच्छा है।

''विश्वास के मामलों'' और ''विचार के मामलों'' से हमारा ज़्या भाव है? कलीसिया की बहाली की लहर में, ''विश्वास, एकता के मामलों में; विचार, स्वतन्त्रता के मामलों में, सब बातों में, प्रेम'' में अन्तर किया गया। ''विश्वास के मामलों'' का सज़्बन्ध नये नियम की मसीहियत के न खत्म होने वाले पहलुओं से है, अर्थात उन आवश्यक मामलों से जो समय के साथ बदलते नहीं और जिनकी शिक्षा नये नियम की कलीसिया की स्थापना के समय दी जानी आवश्यक है। ''विचार के मामलों'' में वे प्रश्न आते हैं जो पहली शताज़्दी की मसीहियत के समय महत्वहीन थे।

यहां नये नियम में पाई जाने वाली आवश्यक और अनावश्यक बातों में अन्तर करने का समय नहीं है। बल्कि हमें तो केवल यही पुष्टि करनी है कि हमने इन मुद्दों को दो श्रेणियों में बांट लिया है। उदाहरण के लिए, हमने आम तौर पर विश्वास के मामलों को जैसे पापों की क्षमा के लिए डुबकी से बपतिस्मे की शिक्षा, आराधना में साज़ों के बिना गाने, सप्ताह के पहले दिन (ही) प्रभु भोज लेना आदि जैसे मामलों को वर्गीकृत किया है। दूसरी ओर, हमने विचार के मामलों के प्रश्नों, जैसे कलीसिया को प्रभु के दिन कब और कहां मिलना चाहिए बपतिस्मे कहां दिए जाने चाहिए, प्रभु भोज में दाख रस लेने के लिए एक या एक से अधिक कटोरों का इस्तेमाल करना चाहिए।

जब कलीसिया के अगुवे यह निष्कर्ष निकाले कि कोई विशेष मामला विचार के क्षेत्र में आता है, विश्वास के क्षेत्र में नहीं, तो उन्हें सदस्यों को यह मानने की स्वतन्त्रता दे देनी चाहिए और सब सदस्यों को अलग विचार रखने वाले दूसरे सदस्यों को सहने की शिक्षा देनी चाहिए।

झूठी शिक्षा से सावधान रहना।

कलीसिया के अगुओं को झूठे शिक्षकों और शिक्षाओं की ताड़ में जादूगरों की तरह रहने की आवश्यकता नहीं है। दूसरी ओर, बाइबल उनसे यह मांग करती है कि वे झूठे शिक्षकों से ''चौकस'' रहें, ज़्योंकि प्रेरितों 20:28-31 में पौलुस ने ऐल्डरों को यह चेतावनी दी थी:

> अपनी और पूरे झुंड की चौकसी करो; जिस में पवित्र आत्मा ने तुझ़्हें अध्यक्ष ठहराया है; ... मैं जानता हूं, कि मेरे जाने के बाद फाड़ने वाले भेड़िए तुम में आएंगे, जो झुंड को न छोड़ेंगे। तुझ़्हारे ही बीच में से भी ऐसे-ऐसे मनुष्य उठेंगे, जो चेलों को अपने पीछे खींच लेने को टेढ़ी मेढ़ी बातें कहेंगे। इसलिए जागते रहो ...।

इस तरह की चौकसी के लिए आवश्यक है कि ऐल्डर झूठी और खतरनाक शिक्षाओं का पता चलने पर उन्हें पहचानने में सक्षम हों। जिस कारण अगुवों के लिए अन्य स्थानों में शिक्षा सज़्बन्धी समस्याओं से जागरूक रहना आवश्यक है। इसके लिए निश्चित रूप से आवश्यक होगा कि उन्हें यह मालूम हो कि मण्डली में कौन ज़्या सिखा रहा है।

झूठी शिक्षा से चौकस रहने और इसके सामने आने पर इसे पहचानने से मण्डली के अगुओं को समस्या पैदा होने से पहले ही इस प्रश्न से निपटने का अवसर मिल जाएगा। वे प्रिस्किल्ला और अज़्विला की तरह उसे जो गलत शिक्षा दे रहा हो अलग ले जाकर परमेश्वर का मार्ग और भी अच्छी तरह समझा सकते हैं (प्रेरितों 18:26)। यदि यह ढंग काम नहीं करता, तो वे उसकी शिक्षा को चुपके से बंद करवा कर उसके प्रभाव को सीमित कर सकते हैं। वे जो कुछ भी करें, उन्हें चाहिए कि ''सांपों की नाईं बुद्धिमान और कबूतरों की नाईं भोले'' बनकर ऐसा करें (मत्ती 10:16)।

शिक्षा सम्बन्धी समस्याओं को सुलझाना

शिक्षा सम्बन्धी असहमति पैदा हो ही जाएगी। नये नियम की कलीसिया में भी ऐसा ही हुआ था। पत्रियों के हर पृष्ठ पर प्रारम्भिक कलीसिया की मण्डलियों पर शिक्षा सम्बन्धी अस्तित्व के होने की गवाही मिलती है। कुछ इसी तरह, शिक्षा सम्बन्धी असहमतियां लगभग रहेंगी ही, उन्हें रोकने के लिए चाहे कुछ भी किया जाए। इस बात में कुछ राहत मिलती है: किसी कलीसिया के लिए जब तक शिक्षा सब कुछ है तब तक उस मण्डली में शिक्षा पर कुछ न कुछ असहमति अवश्य रहेगी। जब इसका कोई महत्व नहीं रहेगा, शिक्षा सम्बन्धी कोई झगड़ा भी नहीं होगा।

शिक्षा सम्बन्धी असहमति के कारण बड़ी हानि हो सकती है। हमारे लिए यह जानना आवश्यक है कि अगुओं के कठिन प्रयासों के बावजूद जब शिक्षा के सम्बन्ध में कलीसिया के सदस्यों में असहमति हो तो क्या किया जा सकता है।

यह तय करना कि कोई मुद्दा कितना गंभीर है

ऐल्डरों को भाइयों में पाई जाने वाली असहमति के मुद्दे की गंभीरता तय करनी चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि वे एक बात पूछें कि यह प्रश्न विश्वास के दायरे में आता है या विचार के। उन्हें यह भी पूछना चाहिए कि इस असहमति से इस प्रश्न को उठाने वालों का उद्धार कहां तक प्रभावित होगा। उदाहरण के लिए, कुछ लोगों का यह मानना है कि कलीसिया की स्थापना के बाद यूहन्ना के सब चेलों को फिर से बपतिस्मा लेना पड़ा था। दूसरे यह मानते हैं कि जिन्होंने कलीसिया की स्थापना से पहले यूहन्ना का बपतिस्मा लिया था उन्हें फिर से बपतिस्मा लेने की आवश्यकता नहीं थी। यह मुद्दे के दोनों पक्षों के विश्वासी भाइयों और बहनों का प्रश्न है। परन्तु दोनों पक्ष इस बात पर सहमत हैं: जो भी सही हो, यह मामला आज किसी के उद्धार को प्रभावित नहीं करता, न ही आज किसी के लिए बपतिस्मा लेने की अनिवार्यता को कम करता है। असहमतियों की ओर भी ऐसी ही बातें हैं लेकिन कौन सही है इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, उनकी चिंता करना आवश्यक नहीं है क्योंकि उनसे किसी की आत्मा के खोने का कोई खतरा नहीं है। मुद्दे की ''गंभीरता'' का प्रश्न यह है कि ''क्या इस शिक्षा या व्यवहार से लोगों के खोने का खतरा है ?''

स्थिति के अनुसार काम करना

अगुओं द्वारा मुद्दे की गंभीरता का विश्लेषण करने के बाद, उन्हें चाहिए कि वे स्थिति देखकर उपयुक्त कार्य करें। इसके लिए आवश्यक है कि वे यह देखें कि यह असहमति विश्वास के क्षेत्र की है या विचार के।

विश्वास और विचार में अन्तर करना आवश्यक है। पहली सदी में कलीसियाओं को ऐसे अन्तर करने आवश्यक थे। जब कुछ लोग यह सिखाते थे कि मसीही बनने के लिए अन्य जातियों का खतना होना आवश्यक है, तो यरूशलेम में अगुओं की काफी बहस के बाद इस स्थिति के विरुद्ध निर्णय लिया गया था (प्रेरितों 15:10, 11, 19)। खतने की शर्त

रखने का विचार उद्धार को प्रभावित करता था; इसका विरोध आवश्यक था ज़्योंकि यह विश्वास का मामला था। पौलुस ने विशेष तौर पर गलतिया में कहा था कि उद्धार के लिए खतने की कोई आवश्यकता नहीं है (गलतियों 2:3-5; 5:1-6)।

विचार के क्षेत्र में असहमतियां हो सकती हैं। कई बार स्थानीय कलीसिया में कुछ लोग विचार के मामलों में एक दूसरे से असहमत हो सकते हैं। स्पष्टतया, इन सबका यह निष्कर्ष नहीं होगा कि उनकी असहमतियां महत्वपूर्ण मामले नहीं हैं। तो फिर बुनियादी शिक्षाओं (उद्धार की योजना, कलीसिया की आराधना आदि) पर सहमत होने वालों में विचार के मामलों और विश्वास के मामलों में अन्तर होने पर ज़्या किया जाना चाहिए? उदाहरण के लिए कुछ लोगों का मत होता है कि प्रभु भोज के लिए केवल एक ही बर्तन का इस्तेमाल किया जा सकता है; जबकि दूसरे यह मानते हैं कि बर्तनों की गिनती अपना - अपना विचार है।

ऐसे मतभेद होने पर ज़्या किया जा सकता है? कलीसिया के अगुवे भाइयों में अनावश्यक बातों में असहमति होने पर उपयुज़्त निर्णय कैसे ले सकते हैं? इस प्रश्न का उज़र परमेश्वर की प्रेरणा से रोमियों 14 अध्याय में मिलता है। रोम में कलीसिया में दो गुट थे। पौलुस ने एक को ''निर्बल'' (रोमियों 14:1, 2) और दूसरे को ''बलवान'' कहा था (रोमियों 15:1)। ''निर्बल'' गुट ने भोजन खाने और दिनों को मानने जैसे कुछ निषेधों को मान लिया था (रोमियों 14:2, 5, 21), जबकि ''बलवान'' गुट ने इसे मानने से इन्कार कर दिया था। ''निर्बल'' गुट को लगा कि यह अन्तर विश्वास का है; जबकि ''बलवान'' गुट को लगा कि यह स्वतन्त्रता का मामला है। इस मामले में ''बलवान'' गुट की सोच सही थी: कि ''कोई वस्तु अपने आप से अशुद्ध नहीं'' (रोमियों 14:14; आयत 20 भी देखिए)।

परन्तु पौलुस ने कहा कि इन भाइयों को अर्थात इन दोनों गुटों को इकट्ठे रहना सीखना चाहिए। विशेषतया उन्हें निज़न बातें सीखने की आवश्यकता थी:[1]

(1) *एक दूसरे को स्वीकार करना।* हर गुट को चाहिए था कि दूसरे को स्वीकार करे। ''बलवान'' गुट को चाहिए था कि वह ''निर्बल'' गुट को तुच्छ जाने बिना उसे स्वीकार करे: ''खाने वाले न - खानेवाले को तुच्छ न जानें।'' ''निर्बल'' को चाहिए था कि वह बिना दोष लगाए ''बलवान'' को ग्रहण करे: ''न - खानेवाला खानेवाले पर दोष न लगाए; ज़्योंकि परमेश्वर ने उसे ग्रहण किया है'' (रोमियों 14:3; आयत 10 भी देखिए)।

(2) *सहनशज़ि होना।* ''बलवानों'' को अपने भाइयों की खातिर अपनी स्वतन्त्रता त्यागने के लिए कहा गया था। उन्हें ''अपने भाई के साज़हने ठेस या ठोकर खाने का कारण न'' बनने के लिए कहा गया था (रोमियों 14:13; आयतें 15, 20, 21 भी देखिए)। किसी भाई को ठोकर देने का अर्थ यह नहीं कि उसे परेशान करना है बल्कि इसका अर्थ उससे पाप करवाना और उसके प्राण को संकट में डालना है।

इस मुद्दे पर, ''बलवान'' गुट के लोग सही थे। इसके बावजूद, जो इस लड़ाई में ''सही'' थे उन्हें भी जो गलत थे, सहने के लिए कहा गया। ज़्यों? शायद इसलिए ज़्योंकि वे ''बलवान'' थे। उन्हें मसीही धर्म पर अपने आपको बलिदान करने की अच्छी समझ होनी

चाहिए थी; पौलुस ने कहा, ''हम बलवानों को चाहिए, कि निर्बलों की निर्बलताओं को सहें; न कि अपने आपको प्रसन्न करें। हम में से हर एक अपने पड़ोसी को उस की भलाई के लिए सुधारने के निमित्त प्रसन्न करे। ज़्योंकि मसीह ने अपने आपको प्रसन्न नहीं किया ...'' (रोमियों 15:1-3)। यदि मसीही लोगों का व्यवहार ऐसा हो तो शिक्षा सम्बन्धी कितने ही मतभेदों को दूर किया जा सकता है!

(3) *एक दूसरे का सुधार।* कलीसिया को यह समझना चाहिए कि ''परमेश्वर का राज्य खाना पीना नहीं; परन्तु धर्म और मिलाप और वह आनन्द है।'' हर मसीही को चाहिए कि ''उन बातों का प्रयत्न करे जिनसे मेल मिलाप और एक दूसरे का सुधार हो'' (रोमियों 14:17, 19)।

(4) *विवेक की मानना।* हर सदस्य को चाहिए कि उसकी समझ परमेश्वर की इच्छा से मेल खाती हो: ''परन्तु जो संदेह कर के खाता है, वह दण्ड के योग्य ठहर चुका; ज़्योंकि वह निश्चय धारणा से नहीं खाता, और जो कुछ विश्वास से नहीं, वह पाप है'' (रोमियों 14:23)। इसलिए यदि कोई अपने विवेक के विरुद्ध जाता है, बेशक उसने सही भी किया हो, तो भी वह पाप है।

यदि स्थानीय कलीसिया में शिक्षा सम्बन्धी असहमतियां विचार के मामलों पर हैं, तो रोमियों 14 अध्याय का उदाहरण मानना चाहिए।

असहमतियां विश्वास के क्षेत्र में हो सकती हैं। यदि कलीसिया के अगुवे यह निर्णय लेते हैं कि शिक्षा सम्बन्धी मुद्दा वास्तव में विश्वास से जुड़ा है और यह लोगों के विश्वास से गिरने का कारण बन सकता है, तो वे क्या कर सकते हैं?

सबसे पहले अगुओं को चाहिए कि वे गलत शिक्षा देने वाले को सुधारें। बेशक, ऐसा उन्हें प्रेम से करना चाहिए। व्यक्तिगत आक्रमण करने का दोषी होने का मसीही लोगों के लिए कोई बहाना नहीं है, चाहे किसी झूठे शिक्षक के साथ ही हो। इफिसियों 4:15 के अनुसार मसीही लोगों को चाहिए कि ऐसा वे ''प्रेम से'' करें। 2 तीमुथियुस 2:23-26 में चार सिद्धांत दिए गए हैं: (1) कलीसिया के अगुओं को चाहिए कि वे किसी विवाद को न बढ़ाएं; ज़्योंकि कुछ बातें ऐसी होती हैं जिन पर बहस करने का कोई लाज़ नहीं होता। (2) कई बार सच्चाई के लिए लड़ने वालों के लिए अपने विरोधियों को सुधारना आवश्यक होता है। (3) यह सुधार ''कोमलता से'' होना चाहिए। (4) सुधार का उद्देश्य बहस में जीतना, किसी को नीचा दिखाना या अपनी शान बढ़ाना नहीं बल्कि किसी का उद्धार करना है।

दूसरी बात, जहां तक सम्भव हो उन्हें चाहिए कि झूठे शिक्षक को प्रचार करने से मना करें।

तीसरा, उनकी ज़िम्मेदारी ऐसी शिक्षा का विरोध करके गलत विचारों को सुधारना है।

चौथा, यदि वे देखते हैं कि झूठे शिक्षक ने सार्वजनिक तौर पर पाप किया है और यदि वह मन फिराने से इन्कार करता है लेकिन मण्डली का भाग बना रहता है, तो वे अनुशासनात्मक कार्यवाही करने के लिए स्वतन्त्र हैं। यदि वह मन नहीं फिराता, तो यह अनुशासन अंत में उससे संगति तोड़ लेने तक हो सकता है। परन्तु यह कदम उठाने का निर्णय लेने के लिए

अगुओं को यह निश्चित करना चाहिए कि अनुशासन के लिए कलीसिया के अगुवे ''दोषी व्यक्ति को कलीसिया से बाहर निकालने'' में भाग न लें। कलीसिया का अनुशासन कलीसिया के अगुओं द्वारा नहीं बल्कि कलीसिया द्वारा व्यवहार में लाया जाता है। मण्डली के लिए यह याद रखना आवश्यक है कि जिस व्यक्ति पर अनुशासनात्मक कार्यवाही हुई है उसे शत्रु मानकर नहीं बल्कि भाई जानकर समझाया जाए (2 थिस्सलुनीकियों 3:15)। कलीसिया किसी को इसलिए अनुशासित नहीं करती कि वह ऐल्डर या प्रचारक से असहमत है ज़्योंकि प्रश्न यह नहीं कि वह स्थानीय अगुवे से सहमत है या असहमत बल्कि यह है कि बाइबल से उसकी शिक्षा मेल खाती है या नहीं। अगुओं को यह आश्वस्त करना आवश्यक है कि ऐसी अनुशासनात्मक कार्यवाही बाइबल के अनुसार और प्रेम से हो।

परन्तु सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि यदि कोई समस्या महत्वपूर्ण मामलों से जुड़ी है, तो कलीसिया के अगुओं को सच्चाई पर स्थिर रहना चाहिए, इसके लिए चाहे कुछ भी ज़्यों न हो जाए।

सारांश

अगुओं के सब प्रयासों के बावजूद, मण्डली ''उस विश्वास'' से ''जो पवित्र लोगों को एक ही बार सौंपा गया था'' (यहूदा 3) फिर सकती है। इस स्थिति में ऐल्डरों को ज़्या करना चाहिए? हर परिस्थिति में एक ही फार्मूला काम नहीं करता। वे जो कुछ भी करते हैं वह समझदारी से करना चाहिए। लेकिन साथ ही यह ध्यान रखा जाए कि वह पवित्र शास्त्र के विरुद्ध, अनैतिक या व्यवस्था के विपरीत न हो। सबसे बढ़कर वे झूठे शिक्षकों के आगे हथियार नहीं डाल सकते और न ही डालने चाहिए।

मैंने डॉन मौरिस के बारे में यह कहानी सुनी थी जो लगभग बीस साल पहले अबिलेन क्रिश्चियन यूनिवर्सिटी के प्रधान थे। मुझे बताया गया था कि यह कहानी सच्ची थी। यूनिवर्सिटी के कैज़्पस में कोई विवाद खड़ा हो गया। मुझे नहीं पता कि वह विवाद ज़्या था। लेकिन केवल मैं इतना जानता हूं कि कहानी के अनुसार यह डॉन मौरिस के लिए सच्चाई के प्रति विवेक और वचनबद्धता की बात थी। कहानी इस तरह है कि एक दिन चैपल में खड़े होकर डॉन मौरिस ने कहा: ''जब तक इस कॉलेज का बोर्ड और प्रबन्धकीय मण्डल और स्टाफ और छात्र सच्चाई के लिए खड़े हैं, मैं उनके साथ हूं। लेकिन यदि छात्र सच्चाई को मानने से इन्कार करते हैं, जब तक बोर्ड, प्रबन्धकीय मण्डल और स्टाफ सच्चाई के लिए खड़े हैं, मैं उनका साथ दूंगा। लेकिन यदि स्टाफ फिर जाता है, और बोर्ड और प्रबन्धकीय मण्डल सच्चाई के लिए खड़ा रहता है, तो मैं उनका साथ दूंगा। लेकिन यदि प्रबन्धकीय मण्डल सच्चाई को त्याग देता है, तो जब तक कॉलेज का बोर्ड सच्चाई का साथ देगा मैं उनके साथ हूं। लेकिन यदि बोर्ड और सब दूसरे लोग सच्चाई को त्याग देते हैं, तो मैं अकेला ही रहूंगा!''

इसी प्रकार, मण्डली के अगुओं को भी चाहिए कि आवश्यकता पड़ने पर वे सच्चाई के लिए अकेले खड़े रह सकते हैं!